मनुष्य बनो

प्रेरणा गति

शुभ संकल्प,

क्षमा,

प्रेम,

निष्काम कर्म,

ब्रह्मचर्य पालन,

ाल फकीरचन्दजी महाराज

'मनुष्य बनो' के नियम

१—शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिकता के नियमों का वास्तविक दृष्टि-कोण से प्रचार करना और प्रेम, सभ्यता, आदर, शिष्टाचार, सदाचार सहनशीलता और संयम की शिक्षा देना इसका मुख्य उद्देश्य है। मनुष्य बनना और बनाना।

२—सन्त महात्माओं और ऋषियों की वाणी को सरल, सुबोध और साधारण भाषा में प्रचार करना।

३—सामाजिक उन्नति कारक तथा देशहित कारक लेखों को भी स्थान दिया जायगा।

४—किसी धर्म, पंथ या सम्प्रदाय के खण्डन सम्बन्धी लेख नहीं छापे जायेंगे।

५—यह पत्र प्रत्येक मास की १५ तारीख को प्रकाशित हुआ करेगा।

६—लेखों के घटाने बढ़ाने और छापने न छापने का अधिकार सम्पादक को होगा। लेख सम्पादक के नाम भेजे जाँय।

७—ग्राहकों को पत्र लिखते समय ग्राहक नम्बर व पता साफ साफ अवश्य लिखना चाहिये। उत्तर के लिये जबावी कार्ड आना चाहिये वी० पी० पी० से पत्रिका नहीं भेजी जायगी। इसका वार्षिक मूल्य १०—०० है।

८—यदि किसी मास का पत्र ठीक समय पर न पहुँचे तो पहले अपने यहां डाकखाने से पूछताछ करके वहां से जो उत्तर मिले व अगला अङ्क निकलने से एक सप्ताह पूर्व तक कार्यालय में पहुंचने पर ही दूसरी प्रति बिना मूल्य भेजी जा सकेगी।

९—प्रबन्ध सम्बन्धी पत्र, ग्राहक होने की सूचना, मनीआर्डर आदि मैनेजर के नाम से भेजने चाहिये। मनीआर्डर कूपन पर अपना पता साफ साफ लिखना चाहिये। और पते की तबदीली भी।

प्रकाशक

ओ३म् पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्ण मदुच्यते ।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्ण मेवावशिष्यते ।।

❀ मनुष्य बनो ❀

वर्ष ३३ | चैत्र संवत २०४१ वि० | अङ्क ७

चेतावनी

मैं क्या कहूँ खोलकर तुम से, तुम सबके आधारा ।
तुमसे स्वारथ और परमारथ, तुम में सार असारा ।।
तुम चन्दा सूरज की ज्योति, तुम में नौ लख तारा ।
तुम में ज्ञान ध्यान है तुममें, तुम सबके भंडारा ।।
तुम उत्तम हो तुम मध्यम हो, जैसा करो विचारा ।
तुमसे गेह देह सब प्रगटे, कुल कुटुम्ब परिवारा ।।
अपनी लीला आप जो परखो, भेद मिले निज सारा ।
जब लग और की लीला अटके, भटक भटक झकमारा ।।
अपने अन्तर धसो पियारे, अपना रूप पहचानो ।
अपनी आप निरख का होना, यही है उत्तम ज्ञानो ।।
आप आपको आप पहचानो, राधास्वामी ने समझाया ।
कहा और का नेक न मानो, यह उपदेश सिखाया ।।
सुनो वात तुम गुरु पूरे की, छोड़ो भरम कहानी ।
अपनी निरख परख करो आपही, तब छूटे भव ज्ञानी ।।

काबा .... बुतख़ाना

गर खुदा काबे में रहता है, तो बुतख़ाने में कौन।
हर है गंगा जल में तो, ज़म ज़म के पैमाने में कौन ?
किस से बातें कर रहा है, ज़ाहिदा मुझको बता।
छुप के बैठा है तेरी, तसबीह के दाने में कौन ?
कैस को जब ले चले, बस्ती में, हँसकर यों कहा।
लैला आबादी में रहती है, तो वीराने में कौन ?
दार पर उसको चढ़ाया, पर न समझा यह कोई।
अनल हक़ था कह रहा, 'मन्सूर' दीवाने में कौन ?
हो के तुम पीरेमुग़ां, मस्जिद को 'अशग़र' चल दिये।
यह तो बतलाओ कि अब, आयेगा मैख़ाने में कौन ?

हक़

हक़ को हक़ पूछो तो हमने ही बना रक्खा है।
बन के खुद बन्दा हक़ीकत को छुपा रक्खा है ॥
आप ही ख़ालिक़ बने और आप ही मख़लूक़ कहीं।
खेल एक भूल भुलैय्यां का बना रक्खा है ॥
आप ही क़तरह बने और आप ही दरिया कहीं।
बहर बन कर कहीं सबको मिला रखा है ॥
खुद ही 'मुहम्मद' बने, खुद ही 'मसीहा' कहीं।
'राम' बन करके रहे सबको मिला रक्खा है ॥

—पृष्ठ ३६ का शेष

होती तो वे बीमार नहीं पड़ते परन्तु सत जन साधन द्वारा अपनी सुरत को सम अवस्था में रखते हैं। बीमारी की दशा में भी वह विचलित नहीं होते। दूसरे लोग बीमारी की दशा में विचलित हो जाते हैं। सन्तो और दूसरे लोगों में यही अन्तर है।

यदि तुमने यह अनुभव कर लिया है कि यहाँ कोई किसी का न तो बाप है न बेटा है न स्त्री हैं न पुरुष है न मित्र है न शत्रु है। जब तक साथ है तब तक साथ है। एक न एक दिन साथ छुट जावेगा। इन्हीं से नहीं तुम्हारा साथ तुम्हारे शरीर के मन से भी छुट जावेगा तो समझ लो कि तुम मुक्त हो।

संत-जन शब्द को अपने अन्तर में प्रकाश उत्पन्न करके इसको भी छोड़ने की शक्ति प्राप्त कर लेते हैं वे वीतराग पुरुष कहलाते हैं। वे मौज पर जीवन व्यतीत करते हुए शान्त अवस्था में रहते हैं।

काल का प्रभाव संत-जन पर भी कम वो वेश पड़ ही जाता है। कभी कभी उन पर भी दुख का आक्रमण होता है। तो शान्ति भूल जीत है किन्तु अशान्त नहीं होते।

सुरत मन को शक्ति देकर चलायमान रखती है। वह स्वयं मन नहीं है। सुरत को मन के मंडल में आकर उसमें विक्षेप हो जाता है वह शान्ति चाहती है और इससे निकलना चाहती है।

संतों की शिक्षा अद्वितीय है, मैं इसके ग्रहण करने योग्य नहीं हूँ मैं रक्त रंजित होकर बलिदानी नहीं होना चाहता। मेरा इनके सम्पर्क में आना इसको अपमानित करता है। यह बिचार करते हुए मैं दातादयाल के समीप बैठ गया। दातादयाल ने कहा झूठा खेले साँचा होय, साँचा खेले विरला कोय। यह सुनकर मैं प्रसन्न हो गया। सोचा मैं झूठा ही खेल खेलूँगा अगर साचा हो गया तो वाह वाह नहीं तो क्या परवाह।

एक बार दातादयाल लगभग १५ दिन तक उत्तमा सहजा विरती, मध्यमा ध्यान धारणा, अधमोमूर्तिपूजा, तिथिव्रत अधमोधम्, पर व्याख्यान

देते रहे जिसका सारांश यह है कि सहज का परिणाम सहज वो कठिन का परिणाम कठिन होता है। इसका कहना जितना सहज है उतना ही उसका क्रियात्मिक करना कठिन है।

अब मुझको अनुभव हो रहा है कि न तो कोई बात सहज है, और न तो कोई बात कठिन है। जिसने किसी बात को सहज मान लिया उसके लिए वह सहज है और जिसने कठिन मान लिया उसको वह कठिन है मन की सबलता व निरबलता का खेल है—

—

सूचना

आपको जानकर खुशी होगी कि परम दयाल पन्डित फकीर चन्द महारा के सतसंगों के १० नं० V. O. में स्टीरियो साफ आवाज में जो कि हमारे सतसंगी भाई मनमोहन सिंह द्वारा बनाये गये हैं। मानवता मन्दिर में उपलब्ध हैं। जो सज्जन मँगाना चाहें वह मानवता मन्दिर होशियारपुर से मँगा सकते हैं।

धन्यवाद !

आचार्य मीरा बहिन ने अपने महिला सतसंग केन्द्र कन्नौज की तरफ से ५०) मनुष्य बनो के सहायतार्थ भेजे हैं। हम उन सभी सतसंगी बहनो के आभारी हैं जिन्होंने मनुष्य बनो के प्रचार में सहायता देकर हमारा हाथ बटाया है।

सत सनातन धर्म से –

सतसङ्ग

परमदयाल पं० फकीरचन्द जी महाराज

प्रत्येक मनुष्य जो काम करता है उसका कोई न कोई उद्देश्य या प्रयोजन होता है। बिना प्रयोजन या गरज के कोई काम नहीं करता। जो बिना प्रयोजन के काम करता है वह मतवाला है। मैं सतसंग का काम करता हूँ। क्यों ? क्योंकि मैं हूँ ब्राहमण। छोटी आयु से भगवान या राम या परमात्मा के मिलने की उत्कण्ठा रही। इसी में कुछ उन्मत हो गया। मौज थी या मेरा कर्म था जो मुझको एक दृश्य के सहारे अपने सतगुरु महर्षि शिवब्रतलाल जी महाराज के चरणों में ले गया। उन्होंने मुझे यह संत मत की शिक्षा दी। राधास्वामी, कबीर, नानक, दादू, पल्टू जितने यह सन्त हुये हैं, सुरत शब्द या शब्द योग के अभ्यासी थे। चूंकि उनकी वाणियों में सब मतों का खण्डन था, मेरे दिल को धक्का लगा करता था। तब १९०५ में मैंने प्रण किया था कि मैं इस मार्ग पर चलूंगा और जो मेरी समझ में आयेगा, मैं संसार को बता जाऊंगा।

मैं जो कुछ करता हूं किसी पर अहसान नहीं करता। यह मेरा कर्म भोग है मैं यहाँ कुम्भ पर आना नहीं चाहता था। आप लोगों में से दामोदर दास आदि ने अपने आप ही इश्तहार दे दिये। जगह लेली। मैं आगया। प्रातः जब मैं आया तो वहाँ उन्होंने कहा----"सनातन धर्म की जै!" मैं भी कहता हूं सनातन धर्म की जै। मैं अपने आपसे पूछता हूं और दुनियाँ को कहना चाहता हूं कि सनातन धर्म है क्या ?

सनातन कहते हैं सब से पहला, आदि और धर्म कहते हैं नियम को । सबसे पहिला धर्म क्या हो सकता है जो सबसे पहिले मनुष्य उत्पन्न हुआ था, उसका धर्म था । वही सनातन का धर्म है । वही सनातन धर्म बना ।

अब मैं बीसवीं शताब्दी का मनुष्य हूँ । पढ़ा लिखा हूं । साईस तनजा हूं । सोचता हूँ सबसे पहिला मनुष्य कहाँ से आया ? उसको किसने पैदा किया ? मेरे जीवन के अनुभव में आया कि सबसे प्रथम मनुष्य को उत्पन्न करने वाला कोई महान पुरुष है । वह कौन हो सकता है ? इसका अनुभव मुझे, हुआ कि वह मनुष्य है उसका शरीर भी है और उसका मन भी है और उसकी आत्मा भी है । इसका प्रमाण ऐ सत्संगियो ! तुम लोगों से मिला । कैसे ?

मैं इस क्षेत्र मैं आया करता हूँ । देवास में पिछली बार मैं आया तो एक लडके ने मुझे कहा था बाबाजी ! मैं परीक्षा देने गया । मुझसे प्रश्न-पत्र हल नहीं होते थे । तब मैंने आप क याद किया, आप प्रगट हुये । आप मेरी मेज के नीचे बैठ गये । आप ने मुझसे पर्चा हल करा दिया और १०० में से ९८ नम्बर मिले इस बार जब आया तो एक लडका देवास में मेरे सामने उपस्थित किया गया । उसने कहा–बाबाजी मेरी टांग पर पत्थर आ पडा । उठता नहीं था टाँग टूट गई । दो लडके साथ थे । उठा नहीं सकते थे । आपको याद किया । आप आये । आपने पत्थर उठाकर फेंक दिया । ऐ संसार के प्राणियो ! और भारत के धार्मिक अनुयाइयो ! मैं शपथ खाकर कहता हूं कि मैं नहीं गया न मुझे पता है । फिर कौन गया ?

इस फकीर चन्द को जो उनके अन्तर में या बाहर में प्रगट हुआ, किसने उत्पन्न किया ? अन्तर में प्रगट होने को तो तुम

सब जानते हो। सैकड़ों आदमी कहते हैं, बाबा स्वप्न में भी तू आता है, आदि आदि। तो मैं तो होना नहीं, इससे सिद्ध हुआ कि मनुष्य के मन में इतनी शक्ति है कि वह अपने संकल्प से एक दूसरी वस्तु को पैदा कर सकता है। इसी प्रकार प्रथम पुरुष जो उत्पन्न हुआ वह महान पुरुष हैं जिसे सन्त काल पुरुष कहते हैं। शास्त्र सोहं पुरुष कहते है, मुसलमान खुदा कहते हैं उसने अपने संकल्प से या अपनी वासना के अनुसार अपने जैसा एक मनुष्य पैदा किया जिसको हिन्दू शास्त्र आदि मनु कहते है। जैसे चुम्बक के साथ लोहे की सुई लगा दो तो वह मैगनेटाइज (Magnetise) या चुम्बकीय शक्ति वाली हो जाती है। उसके साथ तीसरी लगा दो, वह मैगनेटाइज हो जायेगी। इसी प्रकार वह जो मन पैदा हुआ वह भगवान ने, परमात्मा ने, इस ब्रह्म ने कि पहाड जिसकी हड्डियाँ हैं, सूर्य चन्द्र जिसके नेत्र हैं, वृक्ष जिसके बाल और नदियाँ जिसका नाडियाँ हैं, पैदा किया। शास्त्र उसे विराट पुरुष कहते है। उसके मन को अव्याकृत, उसकी आत्मा को हिरण्यगर्भ कहते हैं। वह एक महापुरुष है। उसके संकल्प से आदि मनु उत्पन्न हुआ। तो उसके संकल्प में क्या वस्तु थी? वासना। उससे मनु उत्पन्न हुआ। मनु की वासना से फिर सन्तान हुई। उसकी वासना से फिर सन्तान हुई। इस प्रकार इस मानव जाति का क्रम चल निकला। आदि कारण (Root-cause) क्या हैं? वासना। संसार संकल्पमय है। फिर सनातन धर्म क्या हुआ? सनातन धर्म है अपनी वासना। वासना मूल कारण है।

मनुष्य को अपनी वासना को अनुकूल बनाना है, ठीक रखना हैं, और वासना का ठीक रखना ही सनातन धर्म। 'शिव संकल्प यस्तु' यह वेद मार्ग है।

मुझे व्याख्यान देना नहीं आता। क्षमा चाहता हूं। "सनातन धर्म की जै" क्यों जै ? सनातन धर्म हमें क्या सिखाता है ? "शिव, सँकल्पअस्तु" अपने विचार को, अपने संकल्प को अथवा वासना को ठीक करो। इस संकल्प को ठीक कराने के लिये किस शक्ति की आवश्यकता हैं ? गुरु को ज्ञान देने वाले की, संस्कार देने वाले की। फिर सनातन धर्म क्या है गुरु मत, शिव सकल्पमस्तु। जैसा ख्याल वैसा हाल, जैसी मति वैसी गति, जैसी करनी वैसी भरनी।

अब तुम देखो कि सनातन धर्म वालों ने संस्कार दिये हैं। संस्कार क्या है? यह वासना ही तो है। मैं आप सनातन धर्मी हूं मगर सच्चा हूँ। सनातन धर्म की प्रथम सीढ़ी है 'शिव संकल्प मस्तु'। सनातन धर्म की जड़ है वासना पर। जब इस संकल्प के अर्न्तगत हमारा सारा जीवन है। इस को कहते हैं संस्कार विधि। जिस प्रकार के मां बाप हैं, जिस प्रकार के जिनके संकल्प है, जिस प्रकार की इच्छायें अथवा वासनायें हैं उन्ही के अनुसार उनकी सन्तान होगी।

भगवान या मालिक ने आदि मनु को अपने रूप पर प्रगट किया। जो कुछ ब्रह्माण्ड में है, वह अंश रूप में हमारे अन्दर भर दिया। हमारे अन्दर ही देवी है, देवता है, शिव हैं' विष्णु ब्रह्मा है। सब कुछ अन्तर में है अंश रूप से। पूर्ण रूप से उस भगवान में है जिस प्रकार के मां बाप के अपने विचार है, भाव हैं, जैसी आशा हैं, उस कर्म के अनुसार सन्तान होगी। जैसे जैसे विचार तथा कर्म हमारे अपने हैं वैसी हमारी सन्तान है। बच्चा पैदा करते समय जैसे जैसे संस्कार दिये जाते हैं (उस समय जैसे विचार माँ बाप के होंगे) वैसा वैसा प्रभाव सन्तान पर पडेगा। इसलिये इस संसार में मानव जाति के सनातन धर्म में जहाँ ज्ञान है, वहाँ कर्म की फिलोसफी को मुख्य

रखा गया है:-

कर्म प्रधान बिश्व कर राखा ।
जो जस कीन्ह सु तस फल चाखा ॥

मैं बड़ा सत्यप्रिय आदमी हूं । मैं फूंक तो नहीं मार सकता यदि कुछ कर सकता हूं तो आपको शिव संकल्प दे सकता हूं शुभ भावनायें दे सकता हूं । सम्भव है किसी गुरु या महात्मा के पास और कुछ हो । मेरे पास नहीं है । क्यों ? मेरे जीवन का अनुभव है । तुम गृहस्थी हो, भोले भाले जीव हो । तुमको असलियत (सार वस्तु) का ज्ञान नहीं है । एक गुरु या महात्मा उठा उसने दस बीस बातें इधर उधर की लगाई और तुमको अपना बार बरदारी का जानवर बनाया ।

दूसरा उठा उसने तुमको जानवर बनाया । मैं फकीर हूं । मैं इस संसार में इसी लिये आया हूं । मेरे गुरु ने मुझे कहा था:-

तू तो आया नर देही में, धर फकीर का भेषा ।
दुखी जीव को अंग लगाकर, लेजा गुरु के देसा ॥
तीन ताप से जीव दुखी है, निवल अवल अज्ञानी ।
तेरा काम दया का भाई, नाम दान दे दानी ॥

तुम लोग देखते नहीं हो । हम लोग लैक्चर देते है । बडे बडे आडम्बर बनाते है । तुमको ऐसी ऐसी बातें सुनाते है कि तुमको अपनी बारबरदारी का जानवर वना लेते है । क्या कभी किसी महात्मा ने कहा है कि मैं किसी के अन्दर नहीं गया । इतिहास के पृष्ठ खोलकर देखो ! यहाँ एक माई आई हुई थी । आज मेरे पास बैठी थी । पिछली बार जब में आया, वह कहती थी, बाबाजी ! मुझे दर्द था । स्वप्न में आप आये और कहा कि अपने द्वार में कील ठोक दे, तू ठीक हो जायेगी । मैंने ऐसा हीकिया और मैं ठीक हो गई । मैंने वह कील द्वार में ठुकी हुई इन्दौर या उज्जैन में देखी थी । मैं तो स्वप्न में कहने को गया नहीं । फिर

फिर सच्चाई क्या है ? तुमको सच्ची बात कहने वाला तो मिलता नहीं । यदि मिलता है तो तुम उसकी कदर नहीं करते ।

नीचे गावे तोरे तान ।
दुनिया ताका राखे मान ।।

सनातन धर्म की जै । मैंने कहा क्यों ? क्योंकि मैं सनातनिष्ट हूं सनातन धर्म क्या कहता है । यह कि आदि मनु उस कर्त्ता जिसने सृष्टि की रचना की, के सकल्प से पैदा हुआ । आदि मनु के संकल्प से या वासना से सन्तान पैदा हुई । पहिला संकल्प शक्तिशाली था । मानसिक रचना थी । फिर मैथुन रचना हुई । कर्म के क्रम चल निकला और इस सम्पूर्ण जगत के प्राणी इसी कर्म के चक्र में आये हुये हैं । यही कबीर का कथन है—

कर्म गति टारें नाहिं टरी ।।

मुनि वशिष्ट से पण्डित ज्ञानी, सोधि के लगन धरी ।
सीता हरन मरन दशरथ को वन में विपत्त परी ।।
कहाँ वह फन्द कहाँ वह परिधि कहाँ वह मिरग चरी ।
सीता को हर ले गया रावन, सोने की लंक जरी ।।
नीच हाथ हरिश्चन्द्र बिकाने, बलि पाताल धरी ।
कोटि गाय नित पुन्य करत नृप, गिरगिट जोनि परी ।
पाँडव जिनके आप सारथी, तिन पर विपत्त परी ।।
दुरयोधन को गर्व घटायो, यदु कुल नाश करी ।।
राहु केतु व भानु चन्द्रमा, विधि सहयोग परी ।
कहत कबीर सुनो भाई साधो, होनी होके रही ।।

अब तुम सोचो ! दूनिया में दो मार्ग हो गये । एक मार्ग है इस संसार में सुखमय, आनन्द मय, समृद्धिशाली और सम्बन्ध बने रहने का । यह कैसे मिलेगा ? तुम्हारे अपने ही कर्म विचार और वासना से तुमको मिलेगा । मुझको जो कुछ मिलता है यह

सब अपने ही कर्म का फल मिलता है भगवान ने सृष्टि की रचना कर दी । वासना का नियम बना दिया । मैंने आपको प्रमाण दे दिया । कि मेरा कर्म मेरे साथ है । दिमाग में मेरी अपनी जो वासना थी अथवा मेरी स्त्री की, उससे मेरा लड़का उत्पन्न हो गया । मेरे संस्कार उसमें गये मगर उसके जो कर्म है, यद्यपि शक्ति मेरी ही हैं, वह अलग हैं । अतः हर एक जीव इस संसार में अपने अपने कर्म भोगता है । हमारे सनातन धर्म में दो दो मार्ग हैं— एक प्रवृति मार्ग और दूसरा निवृति मार्ग । प्रवृति मार्ग है शिव संकल्पमस्तु । अपने मानसा, वाचा, कर्मणा (मन वचन, कर्म) से शिव संकल्प रखना ही हमारे प्रवृति मार्ग के उत्तम है। इसी शुभ संकल्प में हमारे सोलह संस्कार आते है । बच्चा पैदा करने के समय में गर्भधान संस्कार, फिर नामकरण संस्कार, फिर मूण्डन संस्कार, विवाह संस्कार आदि और अन्त में मृत्यु संस्कार ।

दूसरा मार्ग है निवृति मार्ग जिससे कि हम इस आवागमन के चक्र से सदा के लिये बच जाय और इस चक्र में न आयें । संसार के प्राणियों की इच्छा नहीं है कि वह इस आवागमन के चक्र से निकल जाय । वह यह चाहते ही नहीं है । मेरे पास कितने ही आदमी आते है । कोई पुत्र चाहता है, धन चाहता है, व्यापार अच्छा चाहता है । कोई कुछ चाहता है कोई कुछ तो जो कुछ जिसको मिलता में वह उसकी अपनी तीव्र इच्छा और उसके अपने कर्म का फल मिलता है । मैं क्यों सत्य बात कहता हूं । कितने ही स्त्री पुरुष मेरे पास आये । कम से कम १५० स्त्री होंगी । मेरे जीवन में जिनके पन्द्रह पन्द्रह या बीस वर्ष बाद मेरे प्रशाद से सन्तान हुई । सेठ मोतीलाल इन्दौर वाले सामने बैठे हैं । कितने ही वर्षों इनकी स्त्री के बच्चा हुआ मगर मेरी लड़की है, उसके विवाह को १३ वर्ष हो गये । मैंने कई बार

उसको प्रसाद दिया मगर उसके अभी तक बच्चा नहीं हुआ। सेठ मोतीलाल को दिल का रोग था। मैं इसके घर गया। मैंने कहा तू अच्छा है। कुछ नहीं होगा। उठ! यह अच्छा हो गया मेरी स्त्री दिल के रोग से ६ वर्ष बीमार रहकर मर गई। ५ हजार रुपया उसके इलाज में खर्च किया मगर नीरोग न हो सकी। वह क्या रहस्य है? ऐ मानव! यह रहस्य है तेरे विश्वास का, तेरे संकल्प का।

मैं जो कुछ कहना चाहता हूं, तुम लोगों को नहीं कहना चाहता। मैं भाषण किसी समय 'कल्याण' में छपना चाहता हूं ताकि सनातनियों को पता लगे कि सनातन धर्म है क्या? कहोगे मैं मूर्ति पूजा का खण्डन करता हूं। यदि मूर्ति को भी तुम पूजते हो तो उसमें तुम्हारा संकल्प है। यदि तुम्हारा विश्वास दृढ़ है वहाँ भी तुम्हारा काम बन जायगा। नाम देव को विश्वास था कि नाना के हाथ से ठाकुर प्रसाद खाता है। वह था बच्चा। उसको यह ज्ञात नहीं था कि नाना झूठ मूठ ही प्रसाद लगा के आप हड़प कर जाता है और नाम ठाकुर का लेता है। जब वह चला गया तो उसने हिलाया, भोग लगाया। वह खाता नहीं था। चूंकि उसके दिमाग में विश्वास बैठा हुआ था ठाकुर ने खा लिया इससे क्या परिणाम निकला? यही कि यह सब दृढ़ बिश्वास का फल है। तुम सदा यह विश्वास करो कि भगवान करता हैं अच्छा करता है। बस मेरे पास से एक सबक ले जाओ। दुनियाँ संकल्प की है। तुम विश्वास करलो कि भगवान जो तुम्हारे लिये करता है अच्छा करता है। जहाँ तुमने यह विश्वास कर लिया, तुम्हारा विश्वास ही तुम्हारे लिये लाभकारी होगा। मैं तुमको सच्चा ज्ञान दिये जाता हूं। क्यों? क्योंकि मैं संसार में आया ही इसीलिये हूं।

तो 'शिव संकल्पमस्तु' सनातन धर्म का सिद्धान्त है। उसके

बीच में सब से बड़ी बात यह है जो साधारण आदमी समझ सकते हैं। वह है विश्वास। इसका अनुभव मुझे कैसे हुआ। आप लोगों के कारण! मैं कोई बात कह देता हूं। तुम मुझ पर विश्वास करते हो। अतः वह बात पूरी हो जाती। मगर ढिंढोरा तुम मेरे नाम का पीटते हो कि बाबा ने कर दिया। बाबा ने कर दिया। जो कुछ भी है, ऐ मानव! तेरा अपना विश्वास है। विश्वासम् फलदायकम्। तुम्हारा जी चाहे राम राम पर विश्वास रक्खो अथवा कृष्ण पर रक्खो, चाहे गुरु पर रक्खो चाहे देवी देवता पर रक्खो मगर बुरा न मानना! जो आज देवी को पूजता हैं, कल हनूमान को पूजता है, तीसरे दिन राम को, चौथे दिन गुरु को। धोबी का कुत्ता घर का न घाट का। ऐसे आदमी की पुकार कोई नहीं सुनता। "एक पर निश्चय रक्खो। एक ख्याल लो। वह जो एक है। तुम्हारा संकल्प ही राम है, कृष्ण है, देवी है। तुम्हारा संकल्प ही गुरु है। तुम्हारा संकल्प ही देवता है। वही सब कुछ है। इस बात का विश्वास मुझे कैसे हुआ? कुछ तो मेरे अपने जीवन का विश्वास था, कुछ तुम लोगों ने विश्वास करा दिया। मैं कोई बात स्वाभाविक रूप से कह देता हूं। जिनका विश्वास होता है, उनका काम पूरा हो जाता है। यश मुझे देते हैं। अभी शब्द पढ़ गया था:—

"कर्म गति टारे नहिं टरो।"

कबीर का कथन है कि कर्म गति नहीं टरती। मैं जिस स्थिति (Position) पर आया, सतगुरु वक्त हूं। समय का गुरु हूं समय अनुसार ज्ञान देता हूं। मैं यह स्पष्ट वर्णन क्यों करता हूं? क्या इस स्पष्ट वर्णन से मेरी हानि नहीं! मुझे कोई यश नहीं देता! कोई आकर मत्थे नहीं टेकता। कोई पैसा नहीं देता सिवाय गिने चुने लोगों के जो ज्ञानी हैं। यदि मैं बात को पर्दे में रखता, तुम लोगों से पैसे ले जाता, धन ले जाता और तुम खुशी

से देते । जिनके अन्दर मेरा रूप प्रगट होता है—अफ्रीका में, अमरीका में, आदि आदि स्थानों में उन लोगों से बात पर्दे में रखकर धन ले जाता, परन्तु यह मेरा दुष्कर्म होता । यदि मैं तुमको धोखा देता हूँ तो मैं कर्म के फल से कैसे बच सकता हूँ । चूँकि मैं कुकर्म से डरता हूँ अतः मैं सत्यवादी आदमी हूँ और स्पष्ट कहता हूँ कि मित्रो ! मैं किसी के अन्दर नहीं जाता ।

कर्म गति टारी नाहिं टरे ।

फिर कर्म की गति कैसे टलेगी ? मैं ब्राह्मण हूँ । सनातनी हूँ । तुम गीता भागवत पढ़ते हो । गीता के लेखक श्री वेदव्यास और भागवत के लिखने वाले भी श्री वेद व्यास । अर्जुन ने श्रीकृष्ण के मुखारविन्द से गीता को सुना । भागवत तो यह कहता है कि जब पाँचों भाई मरने के लिए गये तो युधिष्ठर को भी घन्टा या आध घन्टा को नर्क के दर्शन करने पड़े और अर्जुन सहदेव और सब के सब नर्क में थे । केवल गीता सुन लेने से या रामायण का पाठ कर लेने से या बाबा फकर का भाषण सुन लेने से तुम्हारा बेड़ा पार नहीं होगा । मैं इसकी परवाह नहीं करता कि मुझे या मानवता मन्दिर को कोई पैसा दे अपना कमाता हूँ, अपना मेरा मकान है तुम लोगों ने मुझे बुलाया है । मेरे जिम्मे ड्यूटी है जगत कल्याण की । मैं फकीर बनकर आया हूं । मैं तुम लोगों को सच्चा मार्ग बताये जाता हूँ मगर तुम उन लोगों की सुनते हो जो तुम्हारे साथ ४२० करते हैं । उन महात्माओं को तो पूजते हो जो यह कहते हैं कि मरते समय तुम्हें सतलोक ले जायेंगे । लीलावती की माता (इन्दौर वाली) यहाँ बैठी हुई है । इसकी गोद में इसकी कोई रिश्तेदार थी, पड़ी थी । जब वह मरी तो वह कहती थी—बाबा कहता है कि राम राम न जपो, राधास्वामी राधास्वामी कहो और मर गई । चार पाँच आदमी इन्दौर से मेरे पास होशियारपुर आये मैंने कसम खाई कि मैं नहीं गया मगर सच्चे आदमी की कोई कदर नहीं करता । जो धोखा देते हैं अपने डेरे धामों के लिए धन बटोरते हैं संसार उन्हीं का

विश्वासी है।

साँची बात कबीरा कहे। सबके मन से उतरा रहे ॥

दातादयाल महर्षि शिव का एक शब्द मेरे नाम है :—

तू फकीर है मेरे प्यारे, सुन फकीर की बानी।
साधू कहैं फकीर को भाई, साधू जग सुखदानी ॥

मैं फकीर हूँ। जितना काम करता हूँ, तुम्हारे सुख के लिए करता हूँ। क्या सुख ? ऐ मानव ! तू राम को पूजता हैं वह राम तेरे अन्दर रहता है तू कृष्ण को पूजता है वह कृष्ण तेरे अन्दर है। तू बाबा फकीर को पूजता है वह तेरे मन में रहता है। मगर तुमको इस बात का ज्ञान नहीं है। इस अज्ञान के कारण कोई सनातनी बन गया, कोई आर्य समाजी बन गया, कोई दादूपंथी, कोई कबीरपंथी, कोई नानकपंथी, कोई मुसलमान बन गया, कोई कुछ बन गया। इस अज्ञान का मतलब यह हुआ कि भारतवर्ष में मानवजाति विभिन्न पंथ और सम्प्रदायों में बँट गयी जिसके कारण आपस में झगडे होते हैं और सिर फटते हैं। किसी ने अल्लाहो अकबर कह करके हिन्दुओं के सिर काटे, किसी ने हर हर महादेव कह कर मुसलमानों के सिर काटे, किसी ने सत श्री अकाल कह कर के मुसलमानों के सिर काटे। यह क्यों हुआ ? क्योंकि जीवों को ज्ञान नही है। ऐ इन्सान ! तेरा रक्षक हर समय तेरे अन्तर है। तेरा रक्षक भी और तेरा भक्षक भी। वह कौन है ? वह तेरा अपना ही मन है। अतः इस मन को किसी गुरु को अर्पण कर दे। किसी गुरु की संगत में जा ! उसके वचन सुन ! ताकि तेरी समझ में आये कि असलियत क्या है। तुम लोग गृहस्थी हो, नागा (साधु) आते हैं। उदासी (साधु) आते हैं। इनके आपस में लट्ठ चलते हैं। फिर तुम भी भौंदू रह गये। तुम उनको खिलाते हो। नाक रिगड़ते हो इनके आगे। यह महात्मा जब लड़कर तुम्हारे सामने अपना नमूना (आदर्श) पेश करते हैं। होश की दवा करो। अपने आपको जानो। तुम कौन हो ? तुम कौन हो ? तुम उस मालिक परम तत्व के अंश हो। उस भगवान ने

मनु के द्वारा तुमको पैदा किया है। अपने रूप को पहचानो। तुम मनुष्य हो।

संसार में दो मार्ग हैं (१) प्रवृत्ति मार्ग (२) निवृत्ति मार्ग। मैंने तुमको प्रवृत्ति मार्ग का पाठ पढ़ा दिया। कर्म की फिलोस्फी है। अब जो महात्मा बनकर आपस में लड़ाई करते हैं, चाहे वह फकीरचन्द है या सनातनी है, या उदासी है, तुम उसको महात्मा कहो, मैं मानने को तैयार नहीं। किसी से कोई द्वेष नहीं। जो संसार के सम्पूर्ण प्राणियों को अपने जैसा समझता है, वह महात्मा है। वह महात्मा नहीं जो सन्यासी बनकर उदासियों से घृणा करता है। वह उदासी महात्मा नहीं, जो उदासी बनकर निर्मलियों के साथ द्वेष रखता है। सोचो मेरी बात को! आँखें खोलो! मैं निर्भय आदमी हूँ क्योंकि आया इसीलिए हूँ। तुमको सुख किसी महात्मा ने फूँक मारकर नहीं देना है। तुमको सुख तुम्हारे अपने कर्म से मिलना है, तुम्हारी नीयत से मिलना है, तुम्हारे अपने आचरण से मिलना है। आगे वही शब्द सुनो :—

पर उपकारी जन हितकारी, गुरु के आज्ञाकारी।
औगन त्यागी गुन के ग्राही, दया भाव चित धारी॥
निज सोधें मन परबोधें, जीव दोष नहि दृष्टि।
अपने भाव में बरतें निसदिन, करें दया की वृष्ट॥

जो पूर्ण महात्मा होता है, वह अपने रूप में आप रहता है। अपना उसका रूप क्या है? जो संकल्प करने की अवस्था से पहिले था। जब फुरना हमारे अन्तर में उठती है, हम संकल्प करते हैं सोचते हैं। दसवें द्वार से आगे जो रहता है, वह अपने रूप में रहता है। उसके अन्तर से स्वाभाविक रेडियेशन निकलती है। जिस प्रकार एक सुन्दर स्त्री के देखने से एक युवा मनुष्य का मन विचलित हो जाता है, चाहे वह स्त्री उसकी तरफ देखती तक न हो, इस प्रकार एक सत्पुरुष के दर्शन से संसार के अशान्त प्राणियों को ठंडक मिलती हैं। मिलनी चाहिए बशर्ते वह अशान्त हों और शान्ति के इच्छुक हों। इसलिए सन्तों और महा-

पुरुषों की महिमा है। किन सहापुरुषों की ? जो अपने रूप मे स्थित रहते हैं। आत्म स्वरूप में रहते हैं। संत की महिमा बड़ी ऊँची है वशर्ते कोई सन्त हो।

मैं उसको राधा स्वामी नहीं समझता जो सन्त होकर सनातनियों को बुरा समझता है। जो सन्यासी होकर दूसरों को बुरा भला कहता है, वह सन्त नहीं है। सन्त की कोई जाति नही कोई पाति नहीं। सन्त अपने रूप में रहता है। उसके लिए प्राणी मात्र एक जैसे होते हैं। उसमें कोई दोष नही होता। पापी से पापी को भी वह गले लगाता हैं। मैं अपने गुरु महाराज की बात सुनाता हूँ। लाहोर की बात है। वहाँ कंजरी वेश्या थी। मुसलमान थी। वह सेठ के साथ रहती थी। कभी वह उनके दरबार में आ जाती तो उठकर कहते माताजी ! राधास्वामी अब बात सोचने वाली है। वह वेश्या ! मुसलमानी ! दूसरे के घर में रहती थी। जब वह मिलती तो उसके पांव पर हाथ रखकर कहते माता जी राधास्वामी ! आर्य समाजी, सनातनी और हर एक सम्प्रदाय वाले बहुत से आये। सबने कहा महाराज ! हमारे घर चलो ! हमारे घर चलो !! वह भी आई। उसका जो सेठ था वह भी साथ आया। वह कहती है महाराज ! मैं पापिन हूँ। मेरे घर चलो। वह कहैते हैं अच्छा ! हम इसके घर चलेंगे। लोगों ने कहा आपके पास सत्संग के लिए कोई नहीं आयेगा ! उन्होंने कहा कि मैं किसी को बुलाने नहीं जाता कि सत्संग के लिए आओ ! धोबी के घाट पर मैले कपड़े जाते हैं। याद रखना मेरी बात को ! जो कपड़े साफ हैं वह सन्त और साधुओं के पास क्यों जायेंगे। हम सब में अवगुण हैं। कोई भी अवगुण रहित नहीं। मैं हूं, तुम हो। जो जीव हैं उसमें जीवपना है। महात्मा हो, संत हो, कोई हो जब तक अपने रूप में नहीं है, वह देह में आयेगा उसमें किसी न किसी कमी का होना अनिवार्य है, क्योंकि जीव के सामने सब वस्तुयें मौजूद होती हैं। इसलिए हम लोग, (आदेश है), किसी का अवगुण नहीं देखते। किसी की उच्च दृष्टि करने के लिए, किसी दृष्टि से बात कह

दी जाती है, यह दूसरी बात है, वरन् मुझे क्या ? जो मरजी हो करता फिरूँ । मेरे जिम्मे ड्यूटी थी मैंने उसे पूरा किया । आगे उसी शब्द में आता है :-

मोह मया और छल चतुराई, छोड़ें मूल विकारा ।
पर हित लागी सहज विरागी, ज्ञान बुद्धि भंडारा ।।
दुख कलेश सहें अपने सिर, जीवन का करें सुधारा ।
भव दुःख भंजन काम निकंदन, जम से दें छुटकारा ।

यह है फकीर या साधू का काम । वह मनुष्य को उसके संकल्प से जिसमें वह फंसा हुआ है, निकालने का प्रयत्न करते हैं ।

यह तुम्हारा दामोदर है, जिसको तुम जानते ही हो, जो इसकी दशा थी कि जहाँ इसने अपनी सारी सम्पति लुटवाई । पागल हुआ मेरे पास गया । केवल इस ख्याल से कि इसके संशय भ्रम चले जाय, इसको शांति मिल जाय, बात इसकी समझ में आ जाय । मैंने यह खेल खेला और आपसे क्या लेना ?

इसको कहते हैं :—

दुःख कलेश सहें सिर अपने, जीव का करें सुधारा ।

मैं जितना काम करता हूँ, अपकी नीयत से दूसरों के भले की इच्छा रखता हूँ मगर दूसरे चाहते नहीं । 'तुम लोग संसार के चक्र से तो बचना नहीं चाहते' तुम तो मुझे भी अपने चक्र में फंसाने की कोशिश करते हो ।

दुनियाँ में दो मार्ग हैं—एक संकल्प का मार्ग और दूसरा निःसंकल्प का मार्ग । तुम गृहस्थी हो । तुब सब तो निःसंकल्प के मार्ग पर नहीं चल सकते । निःसंकल्प अर्थात् निवृति मार्ग के खास खास—

नानक कोटिन में कोऊ, नारायण जिन चेत ।

बहुत ही थोड़े आदमी हैं जो आवागमन से बचना चाहते हैं । इस विषय पर बाद में कहूँगा तुम्हारे व्यवहारिक जीवन के लिए बताता हूं

कि संकल्प शुभ करो। यह कर्म का का क्षेत्र है। कर्म के सम्बन्ध में शब्द हैं :—

कर्म गति टारो नाहिं टरे।

अब देखो कर्म क्या है ? कर्म तुम्हारी वासना है। पहिले तुम्हारे अन्दर इच्छा या वासना उत्पन्न होती है। फिर तुम जुबान से शब्द निकालते हो या फिर तुम्हारा हाथ हिलता है।

देखो स्त्रीयां बैठी हुई हैं। सुनें ! राम के साथ सीता वन को गई। वहां से रावण हर ले गया। हिन्दू लोग यह कहेंगे कि वह अवतारी जीव थे। ठीक है। मैं मान लेता हूं। मगर कर्म जो हैं यह एक तो ब्रह्माण्डीय (Universal) कर्म है। एक हमारा व्यक्तिगत (Individual) कर्म है। हर एक को अपना कर्म भोगना पड़ता है। यद्यपि वह कर्म या (ब्रह्माण्डीय कर्म) के आधीन रहता है। सीता को रावण क्यों हर लेगया सीता ने घोर पाप किया। वैसे पतिव्रता थी। वह क्या पाप किया ? लक्ष्मण उनके साथ गये थे। पुत्र की हैसियत में ! उन्होंने सेवा की। जब मारीच मरने लगा, उन्होंने धोखा दिया। हाय लक्ष्मण ! हाय सीता तो सीता को सन्देह हुआ कि राम पर आपत्ति आई है। उसने लक्ष्मण को कहा — लक्ष्मण जाओ ! तुम्हारे भाई पर आपत्ति आई है। लक्ष्मण ने कहा कि मुझको मेरे भाई ने कहा था कि तुम्हारी रक्षा करूँ। उन पर कोई आपत्ति नहीं आयेगी। तो सीता ने इनको ताना मारा कि मैं समझ गई, तुम्हारी नीयत खराब है। इसी बुरी नीयत से मेरे साथ आये हो। किसी निर्दोष को जो तुम्हारा असली और सच्चा हितैषी है तुम उस पर झूँठा कलंक लगाते होतो तुम पाप से कभी बच नहीं सकते जिसके बाप ने अपना खून सींच-सींचकर पुत्रको पाला है, वह यदि अपने अज्ञान से अपने माता-पिता का विरोध करता है तो उस लड़के का कल्याण नहीं हो सकता। इसमें कोई सन्देह नहीं कि इस समय बाप बाप नहीं रहे, मां माँ नहीं रही। बेटा बेटा नहीं रहा। स्त्री स्त्री नहीं रही। मां बाप का भी दोष होता है। इसमें भी बाप को बाप बनना नहीं

आता । मेरे कहने का भाव यह है कि हमको जो कुछ मिलता है हमारे ही कर्मो का फल मिलता है । जो मनुष्य किसी के साथ प्रेम करता है, नेकी करता है, उसके बदले में वह बुराई देता है, उसका बुरा परिणाम होगा ।

कर्म गति टारी नाहिं टरे

मुनि वशिष्ठ से पंडित ज्ञानी, सोध के लगन धरी ।
सीता हरन, मरन दशरथ का, वन में विपत्ति परी ।।

यह है कर्म की गति ! कर्म हैं हमारी नीयत ! हमारा भाव ! मैं अपना मुंह काला करके दुनिया को उपदेश दिया करता हूँ । जिस घर में कलह रहती है, पति नेक है शुद्धात्मा है, स्त्री कलहिनी है । यदि उसको अनुचित रूप से तंग करती रहेगी तो वह स्त्री कभी सुखी नहीं होगी । स्त्री भली है, पति कलह करता है । वह स्त्री को अनुचित रूप से तंग करता रहेगा तो वह कभी सुखी नहीं रहेगा । यह मेरे जीवन के अपने अनुभव हैं ।

मैं फकीर हूं । मेरे छोटे भाई राय साहब के तीन बच्चे मैंने पाले । नौ वर्ष मेरे पास रहे । वह कमाता था मगर पैसा नहीं देता था । मेरे घर में मेरी स्त्री कलह रखती है । मैं निर्दोष था क्यों कि मैं साधूवृति का था । मेरे लिए सब एक थे । इसमें मैं यह समझता था कि इसको दण्ड मिलेगा । जब मेरा मकान बन रहा था, मेरा जमाई आया । कहने लगा मकान ऐसा बनाओ कि तुम्हारे दोनों लड़के बराबर-बराबर बांट लें । मैंने कहा कि तुम यही धन्य समझो कि एक बच जाय । अन्त में मेरा एक लड़का मर गया ।

यह मेरे जीवन के अनुभव हैं, क्यों कि मेरे जिम्मे डयूटी है परोपकार का काम । मैं पर हितकारी कैसे बन सकता हूं ? इस तरह कि मैं तुम्हारे हित की बात बताता हूं । जिस घर में कलेश रहती है यह वहाँ हुआ करता है । यह माइयाँ सत्संग में

आती है। लाख मन्दिर में मत्था टेको, ज्ञान का पाठ पढ़ो तुम-को मैंने गीता के पाठ सुनने वाले अर्जुन का हाल बता दिया। मैं आपको सनातन धर्म की जड़ बता रहा हूं। सनातन धर्म की जड़ बता रहाहूं। सनातन धर्म केवल यही नहीं है कि मन्दिर में जाकर टन, टन टन करो। भागवत में लिखा है कि द्रोपदी क्यों देह सहित नहीं गई और फिर गई नर्क में ? इसलिए कि वह अपने मन में दूसरों की अपेक्षा अर्जुन से अधिक प्रेम करती थी। ऐसे ही भीम के विषय में भागवत में लिखा है कि कि भीम को अपनी गदा का बड़ा भारी अभिमान था, इसलिए नर्क में गया। अत; जो भी व्यक्ति किसी प्रकार का अपने अन्दर अहंकार रखता है उसकी यही दशा होती हैं। यह कर्म का क्षेत्र है। कर्म के चक्र से कोई नहीं बचा। कहा है :—

नर भोगे बारम्बार, अवश्य फल कर्म किये का।-
एक जो कहिये राम महाप्रभु, पुरुषोत्तम मर्यादा॥
सरजू घाट जाय जल डूबे, पड़ रामायण सम्वादा॥

यह सनातन धर्म है। गुरु वेदव्यास के आगे मेरा सिर झुकता है। कितना सच्चा महापुरुष संसार में हुआ है। जो स्वंय ही गीता लिखता है। स्वंय ही भागवत का रचना करता है। उसने सत्य कहने में कोई कमी नहीं छोड़ी। बिल्कुल निर्भय होकर लिखा है। आप सत्संग में आये हो। मैं यही बताता हूँ कि अपने धर्म को पालो। अपना कर्त्तव्य पालन करो। अपने स्वार्थ को छोड़ो। यह चार दिन का जीवन तुमको मिला है। तुम धन-दौलत की हबिस करते फिरते हो। अपनी नौबत तुम बजाओ मगर अपनी नीयत को शुद्ध रक्खो। कबीर का कथन है :—

कबीर नौबत आपनो, दिन दस लेउ बजाय।
यह पुर पाटन यह गली, बहुरि न देखो आय॥

यह जीवन मिला है। हमको मिला है, तुमको भी मिला है।

उपदेश उसको देना चाहिये जो उपदेश का इच्छुक हो। लोगों का बुलाना कि आओ सत्संग में, यह कहाँ लिखा है! यह तो गरज का सौदा है महाराज! मुझे पंजाब गवर्नमेंट ने बुलाया वहाँ तो मैंने उनको लिखा कि तुम शासन शक्ति के जोश में हम फकीरों पर हकूमत करना चाहते हो। कुआँ प्यासे के पास नहीं जाता प्यासा कुए के पास आता है। जिनको कुछ सोखना है मेरे पास आये। मैं नहीं आऊँगा। यह लिखा मैंने पंजाब गवर्नमेंट को और यहाँ महात्माजन, जब मंत्री आ जाते हैं तो हाथ बाँधे फिरते हैं।

सातों शब्द जो बजाते, घर घर होते राग।
ते मन्दिर खाली पड़े, बैठन लागे काग॥

यह है जीवन का हाल कबीर के कथानुसार। झूठ भी नहीं है। कहां जाऊँगा मैं! कहां गये नेहरू! कहां गये दाता दयाल! कहाँ जायेंगे आप सब! दुनियाँ स्वप्नवत है। तो जब तक जीवन है और प्रवृति मार्ग चाहते हो तो अपने मन, वचन, कर्म को शुद्ध रक्खो। नीयत शुद्ध रक्खो। अपने धर्म को निभाओ जो ड्यूटी कुदरत ने तुमको दी है उसको पूरा करो और समझलो कि हमने चला जाना है।

ऊँचा महल चिनावते, करते होड़म होड़।
सुवरण कली ढलावते, गये पलक में छोड़॥
पाँच तत्व का पूतला, मानस धरिया नाम।
दिन चार के कारने, फिर फिर रोके ठाम॥

कबीर मन्दिर लाखका, जड़िया हीरा लाल।
दिना चार का पेखना, बिनस जायगा काल॥
कबीर मरेंगे मर जायेंगे, कोई न लेगा नाम।
ऊजड़ जाय बसायेंगे, छोड़ बसन्ता गाम॥

मौत बिसारी बावरे, अचरज कीया कौन ।
तन माटी मिल जायगा, ज्यों आटे में नौन ॥
जन्म मरन दुख याद कर, कूढ़े काम निवार ।
जिन जिन पंथों चालना, सोई पथ संवार ॥

यह है सनातन धर्म ! 'जिन जिन पंथों चालना, सोई पंथ संवार ।' हम दुनिया में आये है । यह संकल्प की दुनियाँ है। कोई किसी संकल्प को लेकर चलता है, कोई किसी मार्ग पर चलता है । कोई कर्म योग से, कोई भक्ति योग से, कोई ज्ञान योग से चलता है । अपना-अपना कर्म करो। उसमें सच्चे रहो । कबीर कहते हैं :—

जन्म मरन दुख याद कर, कूढ़े काम निवार ।
जिन जिन पंथों चालना, सोई पंथ संवार ॥

हम इस जन्म में कर्म करते हैं । मैं ब्राह्मण हूँ । ज्योतिष जानता हूँ । कर्म फिलोस्फ को मानता हूँ । कई रिश्तेदार व मित्र आदि के जन्म पत्र मैंने भृगुसंहिता से निकाले । उनके हालात ठीक निकले । पिछले जन्म में जो कुछ किया हुआ है हमको भरना पड़ता है । एक व्यक्ति रघुवीर सिंह नाम का था । राजपूत था । उसको फोड़ा होगया । डाक्टरों ने कह दिया कि कैंसर है । वह मेरे यहां मानवता मन्दिर में आ गया और वहीं आकर उसकी मृत्यु हुई । मरने से दो तीन पहले मैंने उसकी कुण्डली भृगुसंहिता वाले ज्योतिषी के पास भेजी । वह मेरे परिचित थे । वह वहां से मुझे सुनाने के लिये आये । उसमें लिखा हुआ था कि वह व्यक्ति पिछले जन्म में साहूकार था । घाटा पड़ गया । फिर किसी का मुनीम हो गया ।

वह व्यक्ति, जिसका वह मुनीम हुआ था, मर गया । उसने चालाकी से उसकी सारी सम्पति अपने नाम लिखा ली । अब यह जन्म लेता है । जवानी में मर जाता है । वह जो उस सेठ के बच्चे हैं वह इसके रिश्तेदार बनते हैं । अब ७०-७५ हजार रुपया छोड़ गया । मैं शायद गलती भी मान लेता मगर उसमें एक दो पाँइट मुझे मिले । एक तो मेरे विषय

में लिखा था और एक उसके विषय में कि उसके कुटुम्ब का कोई रिश्तेदार उसके बच्चों की संभाल करेगा। कोई उसके रिश्तेदारों में से था जो मिलटरी में नौकर था। जब वह मर गया उसने नौकरी छोड़ दी। अब उसके मकान पर बैठा हुआ है। तो मुझे निश्चय हुआ कि हम सब कर्म के फल भोगते हैं। सनातनियों को चाहिए जो कि कर्म को मानते हैं अपने आपको संभाल कर रक्खें। कोई व्यक्ति कर्म को नहीं मानता। तह यदि अपने कर्म को ठीक नही करता, उस पर कोई पाप नहीं मगर जब हम मानते हैं कि हमारा कर्म हमको अगले जन्म में आता है, फिर हम गलती खाते हैं। फिर जो जान बूझकर गलती करता है उसका दण्ड तो उसको मिलेगा। हम कर्म और धर्म से अपने कर्मों के फल से बच कैसे सकते हैं! आप यहाँ क्यों आये हैं? कहेंगे सत्संग को। सत्संग से क्या मिलता है?

बिन सत्संग विवेक न होई।
राम कृपा बिनु सुलभ न सोई॥

सत्संग से सच्ची समझ मिलती है। वह समझ मिलती है, जिससे तुम इस लोक में सुखी हो, और परलोक में भी सुखी हो। यदि जिज्ञासु आता है, तो ध्यानपूर्वक सुनेगा। जो तमाशा देखने आता है, वह और बातें सोचता रहेगा। इसलिए सत्संग केवल अधिकारियों के लिए होना चाहिए। सत्संग तमाशा नहीं है और न यह मेला है। यह तो दुनियां ने तथा हम लोगों ने एक तमाशा बना लिया है। जिस तरह और विषय हैं इसी तरह सत्संग एक विषय बन गया है। सत्संग बड़ी भारी वस्तु है, बशर्ते कि कोई सत्संग का अधिकार मिले। सत्संग की कदर करने वाले बहुत कम लोग है। आदमी बीमार होता है। डाक्टर के पास जाता है। बड़े अदब से बैठता हैं। यदि टीका लगने के दस रुपया भी माँगे तो दस रुपया निकाल कर दे देता हे क्योंकि उसकी गरज होती है। सत्संग में तुमको मोती मिलते हैं, हीरे मिलते हैं। तुम उसकी कदर नहीं करते। सत्संग के वचनों को इस कान से सुन के उस कान से निकाल देते हो।

क्या लाभ ? यदि मेरे वश में हो तो रात को दो बजे सत्संग रक्खूँ मगर तुम लोगों ने माना नहीं। जिनको आवश्यकता हो वह उस समय आयें। यहाँ वह हिसाब है :—

बेकदरों की दोस्ती, तें क्यों केती हंस।
मांस मांस तेरा सेंहा चट गया, और गुल्लियाँ रल गये पंख ॥

जो सत्संग के लिए आये हैं, उनको कहता हूँ कि अपने मन वचन कर्म को शुद्ध रखने की कोशिश करो।

कबीर खेत किसान का, मृगों खाया झाड़।
खेत बिचारा क्या करे, जो धनी करे ना बाढ़ ॥

यह खेत तुम्हारा मन है। तुम्हारे विचार फसल हैं। तुम धनी हो। तुम ही अपने मन के विचारों पर काबू नहीं रखते तो कोई क्या करेगा। बीज तुम्हारे मन के विचार हैं। जैसे जैसे विचार हैं, तुम वह बोते हो। गेहूँ बोओगे गेहूँ काटोगे। मक्का बोओगे मक्का काटोगे। अच्छी बोओगे अच्छी काटोगे। कबीर का कथन सत्य है कि खेत जो हैं, तुमने इनकी रखवाली नहीं की। तुमको मन को काबू में रखना है। मन पर सवारी तुमको करनी है। किसी और को नहीं करनी है। तुमको मन को कंट्रोल (Control) में रखना है। गुरु महात्मा क्या करते हैं ? सत्संग कराते हैं। तुमको मन के वश करने का तरीका या बिधि बताते हैं। इस विषय पर कल बताऊँगा।

गुरु क्या करे ! क्योंकि कर्म तो तुमको करने हैं। जो तुम बोओगे वह मिलेगा। गुरु या महात्मा ने तुम्हारी प्रकृति के अनुसार जैसी तुम्हारी सभ्यता है, तुम्हारी प्रकृति है, तुम्हारे विचार हैं उसके अनुसार तुमको ऐसा गुर बताता है जिस गुरु से कि तुम अपने विचारों को वश में कर सको, सबके लिए एक सा तरीका नहीं है। हर एक आदमी की प्रकृति अलग अलग है। कोई कर्म योग का अधिकारी, कोई भक्ति योग का, कोई ज्ञान योग का, कोई स्वाध्याय का अधिकारी है। कोई किसी बात का, कोई किसी बात का। इसलिए मैं गुरु मत का मानने

वाला हूँ। मेरे मत में है :—

गुरु जो कहैं सो चित धर ध्यान।
गुरु जो कहैं सो हित कर मान ।।

जीव को पता नहीं कि उसकी गढत कैसे होती है। डाक्टर बेहतर जानता हैं कि बीमार को दवाई कैसी देनी है। इस बीमार को बीमारी है क्या ? बातावरण कैसा है ? मौसम कैसा है ? इसकी प्रकृति कैसी है ? इसको खुराक भी मिल सकती है कि नहीं मिल सकती ? इन सब बातों का ध्यान रखता है। इसलिए मेरा मार्ग है गुरु मत। मैं गुरु मत में आया था। मेरा सुधार मेरे सतगुरु दातादयाल ने और ढँग से किया। मेरे छोटे भाई का और ढँग से किया। मेरी स्त्री का और ढँग से। हर एक के लिए एक आदेश नहीं। इसलिए मेरी समझ में गुरु मत का मार्ग है। इसलिए सनातन धर्म में गुरु की प्रणाली है। छोटी आयु में ही आठ नौ वर्ष के बच्चे को गुरु परायण बनाया जाता था। जो गुरु कुल का पुरोहित होता था, वह उसके वातावरण को देखता था। सब कुछ देखता था। उसके अनुसार उनको शिक्षा देता था।

कहा कीये हम आयके, कहा करेंगे जाव।
इतके रहे न उत्त के, चाले मूल गँवाय ।।

जिन मनुष्यों ने अपने जीवन को बनाया नहीं ! केत्संग किया नहीं ! व्यर्थ जीनन गँवा चले ! सनातन धर्म की शिक्षा क्या है ? इसका मूल कारण (Root Cause) संकल्प है। उस संकल्प के आधार पर हमारे सब संस्कार हैं। नामकरण संस्कार हैं। गर्भाधान संस्कार हैं आदि आदि। तो जैसा हमारी प्रकृति के अनुसार हमको संकल्प मिलता है, उस संस्कार के अनुसार हमारा जीवन बनता है। अब संकल्प अलग है। जीवन अलग है। सबको एक नियम नहीं है।

कबीर गुरु की भक्ति बिन नारि कूकरी होय।
गली गली भूँसत फिरै, टूक न डारे कोय ।।

ओह ! दुनियां ने गुरु भक्ति को यह समझा है कि गुरु महाराज आ

गये। हार फूलों के ले लिये। दो सेर पेड़े ले लिए। चार रुपये ऊपर रख दिये और जाकर साष्टाँग दण्डवत कर दी। यह गुरु भक्ति समझी है। यह गुरु भक्ति नहीं है। यह तो हमारी सभ्यता है। गुरु भक्ति है—

दर्शन करे बचन पुनि सुने।
सुन सुन कर पुनि नित मन में गुने॥
गुन गुन काढ़ि लेम तिस सारा।
काढ़ि सार तिस करे अहारा॥
कर अहार पुष्ट हुआ भाई।
जग भौ भय लाज सब गई नसाई॥

गुरु भक्ति है गुरु के वचन को श्रवण, मनन और निदिध्यासन करना और उसकी आज्ञानुसार चलना। मैं जो कुछ कहता हूँ यह गुरु भक्ति ही है। सन १९३३ में जब सुनाम में सत्संग हुआ, मेरे गुरु महाराज दातादयाल (महर्शि शिव) वहाँ गये। वहाँ सिक्खों की रियायत थी। सिक्ख हुक्के से बड़े चिढ़ते थे। उनके सत्संग का समय होता है सर्दियों में प्रातः ५ बजे और गर्मियों में दिन को १ बजे। अब कोई गरज वाला या जिज्ञासु ही चार पाँच बजे अपने बिस्तर से उठकर सयाल में जायेगा। तो सयाल की बहार थी। लोगों ने मुझे कहा। गुरु महाराज आये हैं, सत्संग कराओ। मैंने कहा बहुत अच्छा! मैंने हाथ जोड़कर कहा—महाराज! यह लोग सत्संग चाहते हैं। बोले अच्छा हम तुम्हारा हुक्म मानते हैं। तुम हमारा हुक्म मानना। मुझे क्या पता था कि क्या हुक्म देंगे। पाँच छः हजार की संगत बैठी हुई। इस तरह स्टेज (Stage) लगी हुई। आरती पढ़ी गई। उसके बाद कहते है, फकीर हुक्का ले आओ। मैंने हुक्का लाकर उनके सामने रख दिया। उन्होंने हुक्का लिया मुँह में। धुआं लगे छोड़ने। ३५ मिनट तक एक शब्द मुँह से नहीं बोले। संगत उठ गई। पाँचसौ आदमी रह गये। हुक्का छोड़ा कहने लगे किसी और को जाना हो वह भी चला जाय। चार आदमी और उठकर चले गये। कहने लगे दरवाजा बन्द कर दो।

कोई अन्दर न आवे। उस समय उन्होंने संकल्प कराया। आप में अच्छे अच्छे महापुरुष यहां बैठे होंगे। उनको संकेत किये जाया हूँ। वह सारा सत्संग मुझे कराया। उन्होंने कहा—फकीर! जमाना बदल जायगा। धर्म सम्प्रदाय समाप्त हो जायेंगे। पुरानी वर्णन शैली समाप्त हो जायेगी तुम अपना शरीर छोडने से पहले शिक्षा को बदल जाना। मुझे उन्होंने नहीं तू "मनुष्य बनो" की आवाज उठाना। मुझे उन्होंने नहीं कहा तू यह करना। मैंने अपने जीवन में जो कुछ बहैसियत सच्चे शिष्य के और बहैसियत एक सच्चे गुरु के अनुभव किया वह कहा। मैं तो किसी के अन्तर नहीं जाता और अलरीका में, अफ्रीका में लोगों के अन्दर मेरा रूप प्रगट होता हैं तो मैं सोचता हूँ कि बात क्या है? कौन जाता है? अब मुझे विश्वास हो गया। ओहो! ऐ मानव तू स्वयं पूर्ण है।

ओउम् पूर्णमिदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्ण मुदच्यते।
पूर्णस्य [पूर्णमादाय पूर्णमेवाव शिष्यते॥

यह वेदमंत्र हैं। ऐ मानव तू स्वयं पूर्ण है। तेरे अन्दर सम्पूर्ण जगत भरा हुआ है। इस मालिक के संकल्प का परिणाम है जिसने आदि मनु को बनाया था। जो कुछ ब्रह्माण्ड में है वह सब कुछ तेरे पिंड में है। तुमको उसका पता नहीं है। यदि तू उस बात को समझ जाय तो सब कुछ तेरे अन्दर ही भरा हुआ है। जितना तू प्रेम करेगा, जितना तू साधन करेगा, जितनी तेरी नीयत शुद्ध होगी, जैसे तेरे विचार होंगे, जैसे तेरे कर्म होंगे वैसा तुझको फल मिलेगा। यह बात मेरी समझ में आई है। मेरे जिम्मे गुरु का ऋण था। उन्होंने कहा था कि फकीर! यह काम कर जाना और मैंने कर दिया। मुझे खुशी है कि मैंने काम किया मगर पैसा नहीं। तुम में से बहुत से राधास्वामी मत के होगे। तुम बुरा मानो या अच्छा मानो। इस गलत गुरु इज्म ने तुम्हारी आँखों में मिट्टी डाली हुई है। तुमको सचाई का कोई पता नहीं। तुम सबके गुरु पशु बने हुए हो।

गुरु पशु नर पशु त्रिया पशु, वेद पशु संसार।
मानष ताही जानिये, जाहि विवेक विचार ॥

सोच समझ से काम लो। अपने मन की गढ़त करो। गुरु भक्ति यही है कि गुरु के सत्संग मे जाकर सभ्यता के साथ बैठो। अपनी सुरत का मुँह खुला रक्खो। जो कुछ सुनते हो सुनते जाओ। फिर घर में बैठकर जुगाली करो। जो शकायें पैदा हों उन पर प्रश्न करो। जहाँ सवाल और जवाब नहीं होते वहाँ गुरु चेले का व्यवहार नहीं है। यहाँ अन्धेर गर्दी नहीं है। न किसी की आंखों में मिट्टी डाली जाती है। यह प्रत्यक्ष प्रमाण है। चेला सवाल करता है गुरु उत्तर देता है। फिर गुरु शिष्य का सम्बन्ध क्या है ? केवल सवाल व जवाब तक है। शेष जो कुछ भी है वह सब तुम्हारे अपने कर्म का फल हैं। गुरु भक्ति फिर क्या हुई ? गुरु भक्ति है गुरु के सत्संग में जाकर अपनी शंकाओं का निवारण करना। अपने भ्रमों को निवारण करना। गुरु की दया है क्या ? कितने ही मुझे कहते हैं--'बाबा दया कर दो।' क्या मैं फूँक मार दूँ ? क्या करूँ ! कहा है :-

जब दया गुरु की हुई, निश्चय की शक्ति मिल गई।
निबलता जाती रही और, बल की शक्ति मिल गई ॥
आ गये सत्संग में और संग सत का हो गया।
दुरमति जारी रही, सुमति की शक्ति मिल गई ॥

यह गुरु की दया है कि बुद्धि को निश्चयात्मक कर दिया। यही शास्त्र कहते हैं। हम लोग तो गुरु पशु हो गये हैं। यह राधास्वामी मत वाले हैं, गुरु पशु बने हुए हैं। किसी को सचाई का पता नहीं। धन्य गुरु धन्य गुरु करना चाहते हैं। तो गुरु भक्ति यह है :--

कबीर गुरु की भक्ति बिन, नारि कूकरी होय।
गली गली भूँसत फिरे, टूक न डारे कोय ॥

क्यों ? क्योंकि गुरु बुद्धि को निश्चयात्मक बना देता है। नारी सुरत है। जिसकी बुद्धि निश्चयात्मक नहीं हुई, वह माँगता फिरेगा। कभी इधर

कभी उधर ।

कबीर गुरु की भक्ति बिनु, राजा गदहा होय ।
माटी लदे कुम्हार की, घास न डारे कोय ।।
काया मज्जन क्या करे, कपडा धोया न धोय ।
उज्जल हुआ न छूटसी, सुख निदड़ी ना सोय ।।
उज्जल पहिने कापड़ा, पान सुपारी खाय ।
कबीर गुरु की भक्ति बिन, बांधा जमपुर जाय ।।

क्यों जायगा यमपुर ? मैं अपने आप से सवाल करता हूँ कि क्यों कबीर टीक कहता है । मुझे यदि आज कबीर की बाणी में या इन सतों की वाणी में सत्यता दिखाई न देती, मैं ब्राह्मण हूँ, मुझे चाहे नर्क जाना पड़ता, मैं इनके विरुद्ध आवाज दे जाता मगर अब मैं कहता हूँ कि गुरु की भक्ति बिन मनुष्य यमपुर जाता है यमपुर तुम्हारा मन है--तुमसे बताता हूँ मन के विचार हैं। तुम मन के संकल्पों से निकल नहीं सकते । इसलिए सनातन धर्म में और सन्तों के मार्ग में पार ब्रह्म और शब्द ब्रह्म है । गरुड़ पुराण में साफ लिखा है । कोई आदमी यमपुर से, धर्म पुरी से या चित्रगुप्त से या योनियों से नहीं बच सकता, जब तक इसकी सुरत पारब्रह्म के लोक और शब्द ब्रह्म में नहीं जाती । मैंने गरुड़ पुराण रहस्य' एक पुस्तक लिखी है । पारब्रह्म प्रकाश है । ब्रह्म है । सावित्री है ।

भूर्भुवः स्वः महः जसःतपः ।
सत्यम् तत सवितुर वरेण्यम् ।।

जब तक मरते समय वह सावित्री और शब्द ब्रह्म तुम्हारे सामने नहीं आयेगा, इस आवागमन के चक्र से तुम छूट नही सकते । जितनी चाहे कोशिश कर देखो ।

यह निवृत्ति मार्ग है । प्रवृत्ति मार्ग और हैं निवृत्ति मार्ग और है ।

जनसंख्या

लेखक—कुबेर नाथ श्रीवास्तव

दुनियाँ की आबादी बढ़ रही है। क्या प्रकृति त्रुटि पर है कि आबादी बढ़ रही है ? मगर दुनियाँ की भूमि को उस मात्रा में नहीं बढ़ रही है, जिस मात्रा में वह जनसंख्या बढ़ रही है। संसार में हाहाकार मचा हुआ है कि जिस मात्रा में आबादी बढ़ रही है उसको देखते हुए ऐसा लगता है कि कुछ दिनों में संसार की भूमि मनुष्यों के रहने के लिए मकान बनाने हो में समाप्त हो जायेगी तो मनुष्य को भोजन के हेतु खेती करके अन्न उपजाने के हेतु भूमि कहाँ से आवेगी ? इस कारण अनेक प्रकार की योजनाएँ बन रही है, कि मनुष्यों के बच्चे कम पैदा हों ताकि जनसंख्या कम रहे। और मनुष्यों को भोजन के लिए अन्न उपार्जन करने की भूमि बची रहे। कुछ लोग यह अनुमान लगाते है कि आबादी कम होने हेतु विश्व युद्ध अवश्य होगा। फलस्वरूप इससे जनसंख्या इतनी कम हो जावेगी कि एक किलो मीटर की दूरी पर एक चिरा। दिखाई देगा। कुछ लोग यह अनुमान लगाते हैं कि महामारी होगी और लोग भूखों मर जावेंगे। कुछ लोगों की धारणा है कि आज से लगभग सत्तर अस्सी वर्ष पहले जैसे प्लेग आता था, जिससे एक दिन वो रात में गाँव के गाँव साफ हो जाते थे और मुर्दों को कोई फेंकने वाले नहीं मिलता तो लाशें सड़ जाती थीं और दुर्गन्ध फैल जाती थी वैसे ही कोई बीमारी उत्पन्न होगी, जिसकी कोई दवा न होगी और लोग मर जावेंगे। जिससे आबादी कम हो जावेगी। इसी प्रकार के अनेक अनुमान जनसंख्या के कम होने का लोग लगाते हैं। प्रत्येक मनुष्य का ध्यान इसी ओर है कि किसी प्रकार

जनसंख्या बढ़ने न पावे और कम रहे । जनसंख्या के बढ़ने को वह प्रकृति की भूल समझते हैं । इन लोगों से मैं पूछ रहा हूँ कि क्या वह इस बात का उत्तर दे सकते हैं कि जिस तिथि में जिस समय उनका जन्म हुआ है और जिस तिथि को जिस समय उनका देहान्त होगा उस तिथि वो समय को वह एक दिन वो एक पल भी घटा बढ़ा सकते हैं ? सब लोगों का उत्तर यही होगा कि "नही" । हम घटा बढ़ा नहीं सकते । चाहे हम इसके लिए कोई उपाय करें । या हम कितना ही प्रयास करें । तब मैं उनसे यही कहूँगा कि जनसंख्या जो प्रकृति बढ़ा रही है उसको रोकना तुम्हारे बस की बात नहीं है । नदी की धार के वेग को तुम रोक नहीं सकते । यह तुम्हारे बस के बाहर की बात है । हाँ तुम धार के वेग से बचने के लिऐ नदी के वेग की क्षमता कर सकते हो । कैसे ? उससे नहर निकाल कर । तुम सूरज के कड़ी धूप से बचने के लिए उसको नष्ट नहीं कर सकते । हाँ उससे बचने के हेतु मकान के भीतर जा कर बैठ सकते हो । जैसे सर्दी से बचने के हेतु गर्म कपड़े पहिन लेते हो । तुम संसार के रोग को दूर नहीं कर सकते । हाँ अपने रोग की दवा खाकर दूर कर सकते हो । प्रकृति के किसी कार्य को तुम नष्ट नहीं कर सकते हो । हाँ उसको जीवित रखते हुए किसी सीमा तक उसके प्रभाव को बदल सकते हो ।

हमारे मन्तव्य को अब दूसरे प्रकार से समझो । प्रकृति का कोई कार्य त्रुटि पूर्ण नहीं है । बछड़े के जन्म देने के पहले वह गाय के थन में वह दूध भर देती है । कार्य करते समय तुम्हारे थकने के पहिले वह तुम्हारे विश्राम करने हेतु सूर्यास्त कर के रात्रि बना देती है । जैसे भूख लगने के पहले तुम भोजन पका लेते हो ।

विश्वास रखो और हमारी बात को सत्य मानो कि माता के गर्भ में आने के पहले प्रकृति मनुष्य के रोजी–रोटी का प्रबन्ध कर देती हैं। यह दुसरी बात है, कि मनुष्य अपने कायरता से उसको सतर्कता और परिश्रम से न खोजने के कारण अपनी रोजी रोटी न पा सके । और

भूखों मर जावे। इसमें प्रकृति का क्या दोष है। वह इसी प्रकार के अपाहिज वो अल्पदृष्टि लोग हैं, जो यह सोच रहे हैं कि जनसंख्या कम रहे ताकि बिना परिश्रम के भोजन मिले। वे यही नहीं सोचते कि चाहे जनसंख्या कम हो या अधिक प्रत्येक दशा में परिश्रम करना अनिवार्य होगा। बिना परिश्रम के किसी दशा में भोजन नहीं मिलेगा। चाहे कोई दशा हो। परिश्रम करना अनिवार्य है। रहा प्रश्न भूमि के बढ़ने का इस पर ध्यान दो। यदि आज के चालीस वर्ष पहले से आबादी दूनी हो गयी है तो पैदावार पहले से सौ गुनी बढ़ गयी है। क्या यह आश्चर्य की बात नहीं है, जब एक रुपये में कई किलो अन्न का भाव था तो मनुष्य भूखों मर जाता था किन्तु आज जब कई रुपये के मूल्य का एक किलो अन्न है, तो कोई मनुष्य भूखों नहीं मर रहा है। वस्त्र जब चार आने मीटर बिकता था तो बहुत से मनुष्य नंगे रहते थे। आज जब चालीस रुपये मीटर टैरीकाट बिकता है तो सभी मनुष्य रंग-बिरंगे कपड़े पहिने हुए हैं। ये मूर्ख ईश्वर के काम में त्रुटि देख रहे हैं। इस बात का ध्यान में मनुष्य मात्र के समक्ष स्पष्ट कर देता हूँ, कि ईश्वर के काम में त्रुटि नहीं है। त्रुटि इन मूर्ख मनुष्यों में है, जो ऐसा सोचते हैं। ईश्वर का भेद ईश्वर ही जानता है। तुम देखो ईश्वर ने प्रत्येक वस्तु का जोड़ा बनाया है। मनुष्य, जीव-जन्तु, ग्रह-नक्षत्र-तारा-मण्डल, पृथ्वी, आकाश सबका जोड़ा है। दुख का जोड़ा सुख, गर्मी का जोड़ा सर्दी इत्यादि। यदि इसके रहस्य को समझ जाओ, तो दुनियाँ की बढ़ती हुई आबादी में त्रुटि नहीं पाओगे। किन्तु यह तुम्हारे समझ से दूर की बात है। यदि तुम शब्द अभ्यास करते तो गुरु की दया से हमारी बात का अनुभव हो जाता।

राधास्वामी

:—:

अपना अनुभव

(कुबेर नाथ श्रीवास्तव)

संसार में जो व्यक्ति इस विचार के हैं, कि जो व्यक्ति दूसरों का आदर-सत्कार करता है और अभियान नहीं रखता है वह बड़ा और पूज्य व्यक्ति है। वह दूसरों की सहायता आदर सत्कार वो प्रेम करके बड़ा वो पूज्य बन जाता है। जो व्यक्ति इस विचार का है, कि दूसरों का निरादर-अपना वो धीरण करना पड़ा वो पूज्य होने का प्रमाण है वह दूसरों का निरादर अपमान वो घृणा करके स्वयं को छोटा वो अपमानित बना लेता है। प्रेम बड़ाई और द्वेष छोटाई प्रदान करता है।

जिस मनुष्य को इस द्वविन्द संसार संसार से दुख प्रतीत होने लगता है और इससे छुटने के तीव्र विचार को धारण करके अपने अन्तर में शब्द अभ्यास करता है वह अभ्यास से कुशल हो कर अपने दुख को मिटा देता है। जो मनुष्य संसार के भोग विलास ही को सुख प्रतीत करता है वह न तो अन्तर में प्रवेश कर सकता है और न शब्द अभ्यास की उसको आवश्यकता है। सांसारिक भोग विलासी मनुष्यों को शुभ-संकल्पमस्तु की शिक्षा की आवश्यकता है। तथा संसार से दुख प्रतीत करने वाले व्यक्तियों को सुरत-शब्द योग के साधन की आवश्यकता है। जल में मछली तैरती है। हवा में पक्षी उड़ते हैं। न तो मछली हवा में निवास कर सकती है और न तो पक्षी जल में बसेरा ले सकते हैं। आग पर हाथ डालो जल जाएगा, बर्फ में हाथ डालो ठंडक पावोगे। इस प्रकार से सिद्ध होता है, कि यह अटल नियम है कि जो जिस कार्य के योग्य है वह वही कार्य करेगा। जो जिस पद के योग्य है वह उस पद का अधिकारी है। तुम एक मनुष्य को निर्धन और दूसरे को धनी देखकर यह निर्णय भी भली भाँति कर सकते हो निर्धन मनुष्य के हृदय में जाने या अनजाने दरिद्रता बसती है। और धनी मनुष्य के हृदय में सम्पन्नता बसती है। जो मनुष्य दूसरे को निर्धन देखकर प्रसन्न होगा यदि वह

धनी भी है तो वह निर्धन हो जायेगा। जो मनुष्य दूसरे को सम्पन्न देख कर प्रसन्न होगा तो वह निर्धन भी होगा यो सम्पन्न हो जायेगा। एक को निर्धनता के अवस्था में रहने का सामान प्रकृति प्रदान करेगी और दूसरे को सम्पन्नता की अवस्था में रहने का सामान प्रकृति प्रदान करेगी।

संत-जन को संत की अवस्था में आत्म अवस्था, निर्भयता अचिन्तपना और इच्छाशक्ति की प्रबलता प्रकृति प्रदान करती है। और असंत-जन को इसके प्रतिकूल भय, चिन्ता, इच्छा शक्ति की निर्बलता और आत्म अवनति प्रदान करती है। इसमें प्रकृति का क्या दोष है। जो मनुष्य जिस वस्तु की इच्छा रखता है वह वस्तु उसको प्रदान करना अनिवार्य है। पुरुषार्थहीन और निकम्मे के हृदय में दरिद्रता और पुरुषार्थी और साहसी के हृदय में सम्पन्नता बसती है जो कि उनके हृदय से निकल कर उनको घेर लेती है।

मैं निर्बलता वो अस्वस्थता के कारण शरीर में जब दुख का आभास करता हूँ, तो इससे छुटकारा पाने के हेतु अन्तर में प्रवेश करके विचार करने लगता हूँ, कि दुख कहाँ से प्रगट होता है। हम कहाँ से इस संसार में प्रगट हुए किसी ने प्रगट किया या स्वयं प्रगट हुये, संसार किसने प्रगट किया मनुष्य मरने के बाद कहाँ जाता है? मनुष्य दूसरे के हेतु तो बहुत कुछ कहता है किन्तु उससे अपने हेतु पूछा जाये तो कोई उत्तर नहीं दे पाता। सोचते सोचते इस परिणाम पर पहुंचा कि संसार की स्थिति अवश्य है किन्तु इसका ओर छोर कोई नहीं पाया। हम सभी कभी दिन वो कभी रात में रहते हैं। देखते हैं सवेरा हुआ। दिन प्रगट हुआ, संध्या हुई दिन लुप्त हुआ, फिर सुबह हुई रात समाप्त हो गई। ये दिन रात सुबह-शाम कहां से प्रगट हुए वो कहाँ छिप गये। अनगिनत मनुष्य जीव-जन्तु प्रगट हुए और गुप्त हो गये। वे कहां से आये और कहाँ गये? बाजा बजता है उससे राग प्रगट होती है हम सुनते हैं बाजा बन्द होता है। राग समाप्त हो जाती है। राग कहाँ से आया और

कहाँ गया कोई बतावे तो सही, तो इस आशय पर पहुँचा कि संसार जादू का दृश्य या सहारा का मरुस्थल है। इसलो ऋषि मुनियों ने स्वप्न कहा है। इसको रचने वाली कोई शक्ति अवश्य है। उसका रूप-रेखा होना अनिवार्य है। किन्तु उसका कोई वर्णन नहीं कर सकता। अनुभव कर सकता है। यह सारी सृष्टि उसकी खेल है जिसको महात्मा लोग मौज कहते हैं। सुख-दुख द्वन्द का स्थान है त्रिगुणात्मिक जगत का खेल है। इसका गुण वो स्वभाव है जनना-बिगड़ना, उपजना-विनसना होता रहेगा। यह मन का मंडल है इससे छुटकारा नही है। मन पर दवाब पड़ता है तो अपना स्थान छोड़ देता है और अमन हो जाता है। कहाँ चला जाता है ? कहने के हेतु उसे शून्य कह देते हैं किन्तु उसका कोई नाम रखना भूल है। वहाँ न सुख है न दुख है। न नर्क है न स्वर्ग है। उससे सभी प्रगट होते हैं किन्तु वह किसी को प्रगट नहीं करता। हम क्या कहें आश्चर्य कहना भी भूल है। तुम हमारी बात को ज्यों का त्यों नहीं समझोगे। ऐसे गुरु की खोज करो जो सुरत-शब्द योग अर्थात सहज योग सिखावे और अन्तर में प्रवेश करा कर तुमको इसका अनुभव को साक्षात्कार करावे। ताकि तुम समझ जाओ कि समझ जाओ कि ससार तुम्हारे आश्रित है तुम संसार के आश्रित हो

मन के सात्र शब्द को जब तुम सुनते रहोगे प्रकाश नहीं प्रगट होगा। प्रकाश तब प्रगट होगा जब सुरत के साथ शब्द को सुनेगे जब तक जिवित हो तुम को किसी न किसी कार्य मैं लगा रहना अनिवार्य्य है। जो लोग अपने कार्य के लाभ हानि सुख दुख से प्रभावित होते रहते हैं वह बंधन में है। जो लोग अपने कार्य के लाभ हानि सुखदुख से प्रभावित नहीं है वह मुक्त हैं।

भला बुरा जो होने वाला है अवश्य ही होकर रहेगा। इससे कोई बच नही सकता। और न कोई बचा सकता है। संत जन यदि किसी को आशीर्वाद या श्राप दे देते हैं और हो जाता है तो यह समझ लो कि ऐसा मौज से होने वाला था। यदि संतजन में कोई ऐसी कोई शक्ति

"मनुष्य बनो" (हिन्दी मासिक पत्र) समाचार पत्र (केन्द्रीय) अधिनियम १९५६ नियम ८ फार्म ४ के अनुसार आपेक्षित आवश्यक सूचना

१—प्रकाशन का स्थान	:	अलीगढ़
२—प्रकाशन अवधि	:	मासिक
३—मुद्रक का नाम	:	श्रीमती सुधा मीतल
क—राष्ट्रीयता	:	भारतीय
ख—पता	:	शिव भवन, लेखराज नगर, अलीगढ़। उत्तर प्रदेश
४—प्रकाशक का नाम	:	श्रीमती सुधा मीतल
राष्ट्रीयता	:	भारतीय
पता	:	शिव भवन, लेखराज नगर अलीगढ़
५—सम्पादक का नाम		श्रीमती सुधा मीतल
राष्ट्रीयता		भारतीय
पता	:	शिव भवन, लेखराज नगर, अलीगढ़
६—स्वत्वाधिकारी	:	श्रीमती सुधा मीतल
संरक्षक	:	परमदयाल फकीरचन्द जी महाराज

७—मैं सुधा मीतल घोषित करती हूँ कि उपर्युक्त विवरण मेरी जानकारी और विवरण के अनुसार सही है।

दिनांक १५ मार्च, १९८४

सुधा मितल
प्रकाशक के हस्ताक्षर

Regd. No. L-ALG-28

पुस्तकें

हमारे यहां

हर्षि शिवव्रतलाल जी महाराज

कृत

हृन्दी की आध्यात्मिक, धार्मिक, स्त्री उपयोगी, स्वास्थ्य व मनोविज्ञान सम्बन्धी ुस्तकें तथा 'शाही' और 'मोती' सिलसिले के उपन्यास तथा र्मदयाल फकीरचन्द जी महाराज ृत उच्च कोटि की अमूल्य पुस्तकें मिलती हैं।

पूरा सूचीपत्र मंगायें।

डाक खर्च सब का अलग है।

ुस्तकें रजिस्टर्ड डाक या रेल से भेजी जाती हैं।

मिलने का पता :—

कार्यालय

मनुष्य बनो

शिव भवन, लेखराजनगर,

अलीगढ़ (उ० प्र०)

ग्राहक सं० 440

श्री Lorula Shankariah

Lorula Kusmaiah & Sons

Opp. To Mahakali temple

Secunderabad - A.P.

अ० स० सम्पादक — महेशचन्द्र मीतल

सम्पादक

व्यवस्थापक व प्रकाशक

श्रीमती सुधा मीतल,

शिव भवन, लेखराज नगर

अलीगढ़।